

भारतीय ज्ञान प्रणाली के वैदिक आधार : एक अध्ययन

जैकी कुमार चौबे

शोधछात्र, संस्कृत विभाग

दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

सारांश

भारतीय ज्ञान प्रणाली मानव सभ्यता की प्राचीनतम, सतत् और समग्र ज्ञान-परम्पराओं में से एक है, जिसकी जड़ें वैदिक साहित्य में निहित हैं। यह प्रणाली केवल भौतिक ज्ञान तक सीमित न होकर आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा दार्शनिक चेतना का समन्वित स्वरूप प्रस्तुत करती है। चारों वेद ज्ञान परम्परा के मूल स्रोत हैं, जिनमें प्रकृति, समाज, कर्म, यज्ञ, ऋत और ब्रह्म की अवधारणाएँ प्रतिपादित हैं। वैदिक विचारधारा का दार्शनिक विकास उपनिषदों में दृष्टिगोचर होता है, जहाँ कर्मकाण्ड से ज्ञानकाण्ड की ओर संक्रमण स्पष्ट दिखाई देता है। “तत्त्वमसि”¹, “अहं ब्रह्मास्मि”² तथा “प्रज्ञानं ब्रह्म”³ जैसे महावाक्य आत्मा और ब्रह्म की अद्वैतात्मक सत्ता को उद्घाटित करते हैं। उदाहरणतः माण्डूक्य उपनिषद् का “अयमात्मा ब्रह्म”⁴ कथन यह दर्शाता है कि समस्त जगत् ब्रह्मस्वरूप है, जो भारतीय ज्ञान प्रणाली की समग्रता को अभिव्यक्त करता है। इस प्रकार भारतीय ज्ञान प्रणाली के वैदिक आधार न केवल भारतीय संस्कृति की बौद्धिक पहचान निर्मित करते हैं, बल्कि समकालीन वैश्विक समस्याओं—जैसे पर्यावरण संरक्षण, नैतिक संकट और मानसिक स्वास्थ्य के समाधान हेतु भी प्रासंगिक दृष्टि प्रदान करते हैं। यह शोध भारतीय ज्ञान परम्परा की इसी सतत्, समन्वयात्मक और सार्वकालिक उपयोगिता को रेखांकित करता है।

मुख्यशब्द:- भारतीय ज्ञान प्रणाली, वेद, उपनिषद्, दर्शन, ऋत, धर्म, ब्रह्म, आत्मा

¹ छान्दोग्य उपनिषद्

² बृहदारण्यक उपनिषद्

³ ऐतरेय उपनिषद्

⁴ माण्डूक्य उपनिषद्



प्रस्तावना:-

भारतीय ज्ञान परम्परा का अर्थ उन ज्ञान प्रणालियों से है जो भारतीय उपमहाद्वीप में विकसित हुईं और अनुभवों, प्रयोगों व सूक्ष्म विश्लेषण पर आधारित हैं। इसके प्रमुख स्रोत— वैदिक साहित्य अर्थात् वेद, उपनिषद्, वेदांग और उपवेद। शास्त्र और दर्शन अर्थात् सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक आदि। लोक विद्या अर्थात् समुदायों और जनजातियों के माध्यम से हस्तांतरित पारंपरिक ज्ञान। भारतीय ज्ञान परम्परा, भारत की वह समृद्ध बौद्धिक और सांस्कृतिक विरासत है जो हजारों वर्षों से निरंतर प्रवाहित हो रही है। यह केवल धार्मिक ग्रंथों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें ज्ञान और विज्ञान का अनूठा संगम है। भारतीय ज्ञान प्रणाली केवल सूचनाओं का संकलन नहीं, अपितु जीवन को समग्रता में समझने की एक सुव्यवस्थित दृष्टि है। भारतीय ज्ञान प्रणाली से तात्पर्य उस ज्ञान-परम्परा से है, जो वेद, वेदाङ्ग, उपवेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, स्मृति, पुराण, दर्शन तथा शास्त्रीय साहित्य में निहित है। यह प्रणाली जीवन को केवल उपयोगिता के स्तर पर नहीं, बल्कि परम उद्देश्य (पुरुषार्थ) के परिप्रेक्ष्य में देखती है। चार पुरुषार्थ—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष भारतीय ज्ञान प्रणाली की व्यावहारिक एवं दार्शनिक धुरी हैं। हितोपदेश में कहा गया है—

“धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः”⁵

अर्थात् धर्म से रहित मनुष्य पशु के समान है। इससे स्पष्ट होता है कि ज्ञान का लक्ष्य केवल बौद्धिक उन्नति नहीं, अपितु नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास भी है। इसमें भौतिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं सामाजिक जीवन का समन्वय दिखाई देता है। वैदिक ऋषियों ने सत्य की अनुभूति को श्रुति के रूप में व्यक्त किया, जो कालान्तर में दार्शनिक चिन्तन का आधार बनी। वेदों से लेकर उपनिषदों एवं दर्शन-परम्परा तक भारतीय ज्ञान प्रणाली की एक सुदृढ़ बौद्धिक परम्परा विकसित हुई।

ऋग्वेद में कहा गया है—

“मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गुरुत्मान्।

एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥”⁶

अर्थात् सत्य एक है, ज्ञानी उसे अनेक नामों से पुकारते हैं। यही कथन भारतीय ज्ञान प्रणाली की उदार, समन्वयी एवं बहुलतावादी दृष्टि का मूल सूत्र है। भारतीय सभ्यता की पहचान उसके विशिष्ट ज्ञानबोध से होती है। यह ज्ञान केवल बौद्धिक विमर्श नहीं, अपितु जीवन-पद्धति है, जो मनुष्य को प्रकृति, समाज और ब्रह्माण्ड के साथ सामंजस्य स्थापित करना सिखाती है। भारतीय ज्ञान प्रणाली का मूल स्रोत वैदिक साहित्य है, जो न केवल धार्मिक ग्रन्थ है, अपितु दर्शन, विज्ञान,

⁵ हितोपदेश श्लोक 25

⁶ ऋग्वेद 1.164.46



समाजशास्त्र, मनोविज्ञान और नीतिशास्त्र का भी आधार है। इसका मूल स्रोत वैदिक वाङ्मय है, जिसे 'अपौरुषेय' माना गया है- "अपौरुषेयं वाक्यं वेदः"⁷

वैदिक ऋषियों ने ज्ञान को केवल बाह्य जगत के अन्वेषण तक सीमित नहीं रखा, बल्कि आत्मानुभूति और ब्रह्मबोध को भी उसका अनिवार्य अंग बनाया। वेद में प्रकृति, देवता, यज्ञ, समाज और जीवन के विविध पक्षों का वर्णन है। ऋग्वेद में ब्रह्माण्डीय सत्ता का बोध, यजुर्वेद में कर्मकाण्ड का दार्शनिक आधार, सामवेद में संगीतात्मक चेतना तथा अथर्ववेद में लोकजीवन का प्रतिबिम्ब मिलता है।

ऋग्वेद भारतीय ज्ञान-परम्परा का प्राचीनतम और आधारभूत स्रोत है। इसमें मानव और ब्रह्माण्ड के बीच सम्बन्ध को देवस्तुति और ज्ञानात्मक चिन्तन के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। ऋग्वेद भारतीय दर्शन, धर्म, संस्कृति और विज्ञान-बोध की मूल आधारशिला है।

ऋग्वेद का मूल तत्त्व ऋत है—जो प्रकृति, समाज और नैतिकता की सुव्यवस्थित नियमबद्धता को दर्शाता है। भारतीय ज्ञान परम्परा में यही ऋत आगे चलकर धर्म के रूप में विकसित हुआ। ऋत से ही सत्य और धर्म की अवधारणाएँ विकसित हुईं, जो आगे चलकर भारतीय समाज की नैतिक संरचना का आधार बनीं।

“ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत”⁸

अर्थ—तप से ऋत और सत्य की उत्पत्ति हुई। देवतावाद और प्रकृतिज्ञान-ऋग्वेद में अग्नि, इन्द्र, वरुण, सोम, सूर्य, उषा आदि देवता प्राकृतिक शक्तियों के प्रतीक हैं। यह दर्शाता है कि भारतीय ज्ञान परम्परा में प्रकृति को पूज्य और चेतन माना गया।

“अग्निमीळे पुरोहितं”⁹

यह मंत्र यज्ञ, ज्ञान और जीवन-शक्ति के प्रतीक अग्नि की महिमा को उद्घाटित करता है। ऋग्वेद में केवल स्तुति नहीं, बल्कि दार्शनिक प्रश्नाकुलता भी है। सृष्टि की उत्पत्ति, अस्तित्व और परम सत्य पर गहन चिन्तन मिलता है।

⁷ अर्थसंग्रह पेज न. 3

⁸ ऋग्वेद 10.190.1

⁹ ऋग्वेद 1.1.1



“कोऽद्वा वेद क इह प्रवोचत्”¹⁰

यह नासदीय सूक्त भारतीय ज्ञान परम्परा की वैचारिक स्वतंत्रता और बौद्धिक साहस को दर्शाता है। मानवतावाद और सामाजिक चेतना- ऋग्वेद में समाज, परिवार और मानव-मूल्यों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है। यहाँ सह-अस्तित्व, सहयोग और समानता पर बल दिया गया है। मंत्र—

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।

देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥¹¹

अर्थात्- मनुष्यों में अलग-अलग दल न होने चाहिए, किन्तु सब मिलकर एक सूत्र में बँधें, मिलकर रहें, इसलिए मिलें कि परस्पर संवाद कर सकें, एक-दूसरे के सुख-दुःख और अभिप्राय को सुन सकें और इसलिए संवाद करें कि मन सब का एक बने-एक ही लक्ष्य बने और एक लक्ष्य इसलिये बनना चाहिये कि जैसे श्रेष्ठ विद्वान् एक मन बनाकर मानव का सच्चा सुख प्राप्त करते रहे, ऐसे तुम भी करते रहो। यह मंत्र भारतीय सामाजिक दर्शन का मूलमंत्र है।

ऋग्वेद का उद्धोष है—

“आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः।

देवा नो यथा सदमिद् वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेऽर्दिवे ॥”¹²

अर्थात्—सभी दिशाओं से कल्याणकारी विचार हमारे पास आँ। यह मंत्र भारतीय ज्ञान प्रणाली की उदार, समन्वयात्मक और सार्वभौमिक दृष्टि को प्रकट करता है। वैदिक काल से लेकर दार्शनिक चिन्तन के विकास तक भारतीय ज्ञान परम्परा निरन्तर विकसित होती रही है। चारों वेद भारतीय ज्ञान प्रणाली की आधारशिला हैं।

यजुर्वेद भारतीय ज्ञान-परम्परा का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्तम्भ है। यह वेद मुख्यतः कर्मकाण्ड, यज्ञ-विधान और सामाजिक-धार्मिक आचरण का व्यवस्थित ज्ञान प्रदान करता है। जहाँ ऋग्वेद में देवताओं की स्तुति है, वहीं यजुर्वेद में उन स्तुतियों को व्यावहारिक जीवन में क्रियान्वित करने की विधि मिलती है। इसी कारण इसे भारतीय ज्ञान परम्परा का

¹⁰ ऋग्वेद 10.129.6

¹¹ ऋग्वेद 10.191.2

¹² ऋग्वेद 1.89.1



व्यावहारिक वेद कहा जाता है। यजुर्वेद में यज्ञ को सामाजिक और आध्यात्मिक उन्नति का साधन माना गया है—“यज्ञो वै विष्णुः”¹³

यजुर्वेद में कर्म और ज्ञान का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। यज्ञ को केवल बाह्य अनुष्ठान न मानकर उसे मानव जीवन, प्रकृति और ब्रह्माण्ड के सामंजस्य का प्रतीक माना गया है। यजुर्वेद में वर्णित यज्ञ केवल धार्मिक कर्म नहीं, बल्कि पर्यावरणीय संतुलन, सामाजिक समरसता और नैतिक अनुशासन के प्रतीक हैं। अग्नि, वायु, सूर्य, जल आदि तत्वों की उपासना भारतीय ज्ञान परम्परा की प्रकृति-केन्द्रित दृष्टि को दर्शाती है, यजुर्वेद के शान्तिपाठ में उद्धृत-

द्यौः शान्तिरुन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥¹⁴

यह शान्तिपाठ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में शान्ति और संतुलन की कामना करता है, जो भारतीय ज्ञान परम्परा की सार्वभौमिक दृष्टि को स्पष्ट करता है।

सामवेद भारतीय ज्ञान-परम्परा का वह अद्वितीय स्रोत है, जिसमें ध्वनि, संगीत और अध्यात्म का सुन्दर समन्वय दिखाई देता है। इसे भारतीय संस्कृति की संगीतात्मक आत्मा कहा जा सकता है। जहाँ यजुर्वेद कर्म का विधान करता है, वहीं सामवेद उस कर्म को स्वर, लय और रस के माध्यम से चेतना तक पहुँचाता है। सामवेद का मूल सिद्धान्त है कि नाद (ध्वनि) ही ब्रह्म की अभिव्यक्ति है। मंत्रों का गायन केवल सौन्दर्य के लिए नहीं, बल्कि आन्तरिक शुद्धि और चित्त-परिवर्तन के लिए किया जाता है।

“अग्र आयाहि वीतये”¹⁵

ऋग्वैदिक मंत्र को जब सामगान के स्वर में गाया जाता है, तब वह साधक की चेतना को गहराई से प्रभावित करता है। यह भारतीय ज्ञान परम्परा में श्रुति की केन्द्रीय भूमिका को दर्शाता है। सामवेद में यज्ञ के समय होने वाले सामगान का विस्तृत विधान है। उद्गाता ऋत्विज द्वारा गाया गया साम देवताओं को आवाहन करने के साथ-साथ मानव मन को भी संयमित और पवित्र करता है। यह भारतीय ज्ञान परम्परा में कर्म-भाव-रस के समन्वय का श्रेष्ठ उदाहरण है। उद्गातृवेद भारतीय ज्ञान परम्परा में रसबोध की आधारशिला रखता है। बाद में विकसित नाट्यशास्त्र, संगीतशास्त्र और काव्यशास्त्र की परम्परा सामवेद से ही प्रेरणा लेती है। यहाँ सौन्दर्य को आध्यात्मिक उत्थान का साधन माना गया है। यज्ञों में सामूहिक

¹³ शतपथ ब्राह्मण

¹⁴ शुक्लयजुर्वेद 36.17

¹⁵ सामवेद 1.1



रूप से गाए जाने वाले साम भारतीय संस्कृति में एकता और समरसता का प्रतीक बने। सामवेद संगीत और साधना के माध्यम से चेतना के उत्कर्ष पर बल देता है, जबकि अथर्ववेद लोकजीवन, चिकित्सा और सामाजिक आस्थाओं का प्रतिनिधित्व करता है।

अथर्ववेद भारतीय ज्ञान-परम्परा का वह व्यापक आयाम है जो मानव जीवन की व्यावहारिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक समस्याओं को एक साथ संबोधित करता है। जहाँ अन्य वेद यज्ञ और देवपूजा पर अधिक केन्द्रित हैं, वहीं अथर्ववेद लोकजीवन का वेद माना जाता है। अथर्ववेद में जन्म से मृत्यु तक की मानवीय चिन्ताएँ—स्वास्थ्य, रोग-निवारण, दीर्घायु, शान्ति, समृद्धि, गृहस्थ जीवन, पारिवारिक सौहार्द—सबका वर्णन मिलता है। यह भारतीय ज्ञान परम्परा की समग्र जीवन-दृष्टि को प्रकट करता है।

“जीवेम शरदः शतम्”¹⁶। अर्थत्-हम सौ वर्षों तक जीवित रहें। यह मंत्र जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण और दीर्घ, स्वस्थ जीवन की कामना को दर्शाता है। अथर्ववेद को आयुर्वेद का मूल स्रोत माना जाता है। इसमें औषधि-सूक्तों द्वारा रोगों के कारण, निवारण और औषधीय वनस्पतियों का उल्लेख है। यह भारतीय ज्ञान परम्परा में चिकित्सा विज्ञान की वैदिक नींव को दर्शाता है।

“ओषधयः पृच्छामि मातरः”¹⁷

यहाँ औषधियों को चेतन और कल्याणकारी माना गया है।

अथर्ववेद में भय, चिन्ता, ईर्ष्या, क्रोध और मानसिक अशान्ति के निवारण हेतु मंत्र मिलते हैं। यह दिखाता है कि भारतीय ज्ञान परम्परा मानसिक स्वास्थ्य को भी उतना ही महत्त्व देती है जितना शारीरिक स्वास्थ्य को। भारतीय ज्ञान प्रणाली का आशय उस समग्र ज्ञान परम्परा से है, जिसमें आध्यात्मिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक, सामाजिक एवं नैतिक ज्ञान का समन्वय दिखाई देता है। यह प्रणाली ज्ञान (ज्ञानयोग), कर्म (कर्मयोग) और भक्ति (भक्तियोग) की त्रिवेणी पर आधारित है।

गीता में कहा गया है—“त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन”¹⁸

¹⁶ अथर्ववेद 19.67.1

¹⁷ अथर्ववेद 8.7.3

¹⁸ भगवद्गीता 2.45



यह श्लोक दर्शाता है कि वेद केवल कर्मकाण्ड तक सीमित नहीं, बल्कि उससे आगे तत्त्वबोध की ओर प्रेरित करते हैं। यह प्रणाली व्यक्ति, समाज और ब्रह्माण्ड के बीच सामंजस्य स्थापित करती है। इसका उद्देश्य केवल सूचना देना नहीं, बल्कि जीवन को परिष्कृत एवं मुक्त करना है।

उपनिषद् और दार्शनिक चेतना

उपनिषदों को वैदिक दर्शन का शिखर कहा जाता है। इनमें कर्मकाण्ड से ऊपर उठकर आत्मा और ब्रह्म की एकता का प्रतिपादन किया गया है। उपनिषदों में वैदिक चिन्तन अपने चरम दार्शनिक रूप में प्रकट होता है। आत्मा और ब्रह्म की एकता, अविद्या-विद्या का भेद, तथा मोक्ष की अवधारणा भारतीय दर्शन का मूल है।

“तत्त्वमसि” अर्थात्- यह गुरु द्वारा शिष्य को दिया गया उपदेश है, जिसका अर्थ है—वह निराकार परमेश्वर (ब्रह्म) और तुम्हारा वास्तविक स्वरूप एक ही है।

“अहं ब्रह्मास्मि” अर्थात्- यह साधक का अपना अनुभव है कि वह केवल एक शरीर नहीं, बल्कि उस असीमित दिव्य शक्ति (ब्रह्म) का हिस्सा है।

“प्रज्ञानं ब्रह्म” अर्थात्- वह चैतन्य शक्ति (चेतना) जिससे हम देखते, सुनते और समझते हैं, वही परम सत्य या अर्थात् ब्रह्म ही है।

ये महावाक्य भारतीय ज्ञान प्रणाली को अद्वैतात्मक आधार प्रदान करते हैं। उपनिषद् भारतीय ज्ञान प्रणाली को आन्तरिक अनुभूति एवं तात्त्विक चिन्तन की दिशा प्रदान करते हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों में यज्ञ की दार्शनिक व्याख्या, आरण्यकों में ध्यान एवं प्रतीकवाद, तथा स्मृतियों में सामाजिक-नैतिक नियमों का विस्तार मिलता है। मनुस्मृति में कहा गया है—

“वेदोऽखिलो धर्ममूलम्”¹⁹

अर्थात्—सम्पूर्ण धर्म का मूल वेद हैं।

भारतीय ज्ञान प्रणाली का व्यावहारिक आधार धर्म, कर्म और मोक्ष की अवधारणा में निहित है। धर्म सामाजिक-नैतिक व्यवस्था का नियामक है, कर्म व्यक्ति के आचरण को दिशा देता है, और मोक्ष जीवन का परम लक्ष्य है। भारतीय ज्ञान प्रणाली का व्यावहारिक आधार धर्म, कर्म और मोक्ष की त्रिवेणी में निहित है। आधुनिक युग में भारतीय ज्ञान प्रणाली का

¹⁹ मनुस्मृति 2.6



महत्व पुनः स्थापित हो रहा है। पर्यावरणीय संतुलन, योग, आयुर्वेद, नैतिक शिक्षा एवं समग्र जीवन दृष्टि में इसके सिद्धान्त अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। आज पर्यावरण संकट, नैतिक पतन और मानसिक तनाव जैसी समस्याओं के समाधान में भारतीय ज्ञान प्रणाली अत्यन्त प्रासंगिक है। योग, आयुर्वेद और ध्यान पद्धतियाँ इसका जीवंत उदाहरण हैं।

उपसंहार:-

उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली केवल प्राचीन ग्रन्थों का संग्रह नहीं, बल्कि जीवन को सही दिशा देने वाली एक समग्र और जीवंत परम्परा है। इसके मूल में वेद हैं, जो मनुष्य को प्रकृति, समाज और ब्रह्माण्ड के साथ संतुलन में जीने की प्रेरणा देते हैं। ऋग्वेद में सत्य और ऋत का बोध, यजुर्वेद में कर्म और आचरण की व्यवस्था, सामवेद में संगीत और चेतना का उत्थान तथा अथर्ववेद में लोकजीवन, स्वास्थ्य और मानसिक शान्ति का मार्गदर्शन मिलता है। उपनिषदों में यह ज्ञान और भी गहन रूप में प्रकट होता है, जहाँ आत्मा और ब्रह्म की एकता का बोध कराया गया है। “तत्त्वमसि” और “अहं ब्रह्मास्मि” जैसे महावाक्य यह सिखाते हैं कि मनुष्य का वास्तविक लक्ष्य केवल भौतिक सुख नहीं, बल्कि आत्मबोध और मोक्ष है। भारतीय ज्ञान प्रणाली धर्म, कर्म और मोक्ष के माध्यम से व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास को एक साथ जोड़ती है। आधुनिक समय में भी इस ज्ञान परम्परा की प्रासंगिकता बनी हुई है। पर्यावरण संरक्षण, मानसिक स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों और समरस समाज की स्थापना में इसके सिद्धान्त अत्यन्त उपयोगी हैं। इस प्रकार भारतीय ज्ञान प्रणाली अतीत की धरोहर होने के साथ-साथ वर्तमान और भविष्य के लिए भी मार्गदर्शक है, जो मनुष्य को संतुलित, सार्थक और मूल्यपूर्ण जीवन जीने की प्रेरणा देती है।

संदर्भ सूची

1. ऋग्वेद. ऋग्वेद संहिता. सायणभाष्य सहित, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, 2010.
2. यजुर्वेद. शुक्ल यजुर्वेद संहिता (वाजसनेयी संहिता). सायणभाष्य सहित, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1971.
3. सामवेद. सामवेद संहिता. पारम्परिक भाष्य सहित, चौखम्भा संस्कृत सीरीज़ कार्यालय, वाराणसी, 2008.
4. अथर्ववेद. अथर्ववेद संहिता. हिन्दी व्याख्या सहित, चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, 2012.
5. उपनिषद्. प्रमुख उपनिषद्. अनुवादक डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, हार्पर कॉलिन्स, नई दिल्ली, 1994.
6. भगवद्गीता. श्रीमद्भगवद्गीता. अनुवादक स्वामी गम्भीरानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2013.
7. मनु. मनुस्मृति. अनुवादक गंगानाथ झा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1999.
8. नारायण पण्डित. हितोपदेश. चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2005.
9. योग, कर्मयोग और जीवन मूल्यों पर स्तंभ।

